Contribution of Vedanga Astrology in Vedarthavavodh

(वेदार्थाववोध में वेदांग ज्योतिष का योगदान)

Dr. Yogendra Kumar,
Assistant Professor, Department of Vedic Science,
Maharishi, University of Management & Technology, Bilaspur, C.G., india
Corresponding Author: shastriyogendra@gmail.com

DOI: 10.52984/ijomrc2203

सारः

इस शोध पत्र में ऋतुओं का वर्णन, संवत्सर की कल्पना पक्षी के रूप में की गयी है, जिसका मुख वसन्त है, दक्षिण पक्ष ग्रीष्म है, पुच्छ वर्षा है, शरद उत्तर पक्ष है तथा हेमन्त मध्य है ऐतरेय ब्राह्मण में पाँच ही ऋतुओं का संकेत है। नक्षत्रों का वर्णन, सूर्य के सात घोडों का वर्णन, चन्द्रमा की कलाओं की वृद्धि तथा ह्रास क्यों होता है इस विषय पर प्रकाश डाला गया है, इसके अलावा पंचांग से सम्बन्धित विषय का अध्ययन किया गया है।

शब्द-संकेतः ऋतु, नक्षत्र, संवत्सर, सूर्य- चन्द्रमा

वेदाहि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ता
कालानिपूर्वाविहिताष्च यज्ञाः।
तस्मादिदंकालविधान शास्त्रं
योज्योतिषंवेद स वेद यज्ञम्।।

(वेदांग ज्योतिष श्लोक 3)

भारत वर्ष में ज्योतिष विज्ञान का जितना विकास हुआ उतना किसी भी प्राच्य देष में नही हुआ इसका कारण यह है कि वैदिक आराधना में प्रधान स्थान यज्ञों का ही है। वेद की प्रवृत्ति यज्ञ का विधान विषिष्ट समय के ज्ञान की अपेक्षा रखता है, यज्ञ याग के लिए समय शुद्धि की बड़ी आवष्यकता होती है।

वेदांग ज्योतिष का कथन है कि व्यक्ति ज्योतिष को भली भाँति जानता है वही यज्ञ को यथार्थ रूप से जान सकता है ज्योतिष वेद पुरूष का चक्षु है जिस प्रकार नेत्र से हीन पुरूष अपने कार्य को करने में असमर्थ रहता है उसी प्रकार ज्योतिष ज्ञान से रहित पुरूष कार्णो में अन्धा होता है।

तैत्तिरीय ब्राह्मण का कथन है कि ब्राह्मण बसन्त में, क्षत्रिय ग्रीष्म में वैष्य शरद ऋतु में आधान करे ।

''वसन्तेब्राह्मणोअग्निमादधीत, ग्रीष्मेराजन्य आदधीत् शरदिवैष्य आदधीत। तै0 ब्रा01।11

इसी प्रकार विषेष तिथियों को यज्ञ में दीक्षा लेने का विधान था नक्षत्र, तिथि, पक्ष, मास, ऋतु तथा संवत्सर के ज्ञान के बिना यज्ञ याग का पूर्ण निर्वाह नही हो सकता। इसीलिए ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान वैदिक आर्यो को विषेष रूप से रखना पड़ता था। वेद के खगोल विषयक नाना प्रकार के ज्ञातव्य तथ्य वर्णन प्रसंगो में प्राप्त होते है। जैसे पृथ्वी गोलाकार आकृति की जानी जाती है। पृथ्वी के गोल होने का संकेत मंत्रो में मिलता है। सूर्य विषयक एक मंत्र कहता है कि सूर्य अपने तेजों से जगत को सुलाता हुआ तथा जागृत करता हुआ उदय होता है।

''निवेषयन् प्रसुवन् अक्रतुभिर्जगत्''।
ऋ0 3।53।3।

उस मंत्र का तात्पर्य है कि सूर्य जैसे–जैसे आकाष में ऊपर चढ़ता जाता है वैसे–वैसे संसार के कुछ भागों मे रात्रि और कुछ भागो में दिन होने लगता है अतः यह घटना तभी सम्भव हो सकती है जब पृथ्वी गोल हो।

सूर्य विषयक अनेक सूक्तों के अध्ययन स उस के भव्य रूप का पूर्ण परिचय हमें मिलता है सूर्य को नाना देवों के रूप में कल्पित किया गया है विष्व में चैतन्य का संचरण करने से सविता, नाना व्यापारों में प्रेरक होने से विष्णु, विष्व को पुष्ट करने के कारण पूषा और कल्याण सम्पादन के कारण वही मित्र है। समस्त भुवनों का वहीं आधार है –

''तंस्मिन्नर्पितंभुवनानिविष्वा''। ऋ. 1 ।164 ।14

ऋग्वेद का षिजब सूर्य के रथ ढ़ोने वाले सात घोड़ों का संकेत करता है तब उसका मुख्य ध्यान सूर्य किरण के सप्तरंगी होने की ओर आकृष्ट होता है अन्यथा वह भली–भाँति जानता है कि यह वर्णन केवल अलंकारिक है – सूर्य के पास न रथ है न उसे ढ़ोने वाले घोड़े जैसा कि ऋग्वेद के (1 ।152 ।5) मंत्र में कहा गया है। –

''अनष्वोजातोअनभीषुरर्वाकनिक्रदत् पतयदूर्ध्वसानुः ''।

चन्द्रमा की स्थिति वेदों में अन्तरिक्ष लोक में बतलायी गयी है। चन्द्र का प्रकाष सूर्य रष्मियों के कारण ही होता है उसमें स्वत प्रकाष नहीं है जैसा कि तै0 सं0 के (3 ।4 ।7 ।1) मंत्र में कहा गया है –

''सूर्यरष्मिष्चन्द्रमागन्धर्वः ''

अमावस्या को चन्द्रमा आकाष में दिखलाई नही पड़ता है इस का कारण है कि अमावस्या को वह सूर्य में प्रवेष करता है उसके बाद वह सूर्य से उत्पन्न होता है। जैसा कि ऐ0 ब्रा0 का एक मंत्र है –

''चन्द्रमा अमावस्यामादित्यमनुप्रविषति, आदित्याद् वै चन्द्रमा जायते। (ऐ0 ब्रा0 40 ।5)

चन्द्रमा की कलाओं की वृद्धि तथा ह्रास क्यों होता है इस विषय में ऋग्वेद (10 ।85 ।5) का मंत्र है –

''यत्वादेवप्रपिवन्तिततआप्यायसेपुनः।

वायुः सोमस्य रक्षितासमानांमासआकृतिः।।

इसका अर्थ है कि देवता लोग यज्ञ में सोम रस को पीते है ऋग्वेद के अनुसार सोम शब्द से लता तथा सोम नामधारी चन्द्रमा दोना ेका ऐक्य प्रस्तुत होता है। पदनुरू प चन्द्र कलाओं को भी देवता लोग पीते है। इसी कारण से उसमें ह्रास होता है।

ऋतुओं के नाम तथा संख्या का उल्लेख ऋग्वेद में नहीं मिलता परन्तु याग क्रिया प्रधान तैत्तिरीय संहिता तथा वाजसनेयी संहिता में ऋतुओं का उल्लेख अनेक बार किया गया है। ऋतु सूर्य से उत्पन्न होती है। नियमत् उनकी संख्या छः है वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद् हेमन्त तथा षिषिर। ऋतुओं का आरम्भ बसन्त से होता है इसीलिए वसन्त ऋतुओं का मुख कहा गया है –

''मुखं वा एतद् ऋतूनाम्। यद् वसन्तः।। (तै0ब्रा01 ।1 ।2 ।6,7)

संवत्सर की कल्पना पक्षी के रूप में की गयी है, जिसका मुख वसन्त है, दक्षिण पक्ष ग्रीष्म है, पुच्छ वर्षा है, शरद उत्तर पक्ष है तथा हेमन्त मध्य है ऐतरेय ब्राह्मण में पाँच ही ऋतुओं का संकेत है।

द्वादषमासाः पंचर्तवोहेमन्तषिषिरयोंः समासेन। (एं0 ब्रा0 1 ।1)

ऋत्वारम्भ के विषय में तैत्तिरीय संहिता का महत्वपूर्ण कथन है कि ऋतुराज का मुख दोनों ओर होता है। अतः यह कौन जान सकता है कि ऋतु का मुख कौन सा है।

उभयतोमुखमृतुपात्रं भवति। कोहितद् वेद यद् ऋतुनांमुखम्।

यह कथन ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से भी यथार्थ है ऋतुएं सूर्य की स्थिति पर अवलम्बित होती है। फलतः ऋतुका आरम्भ जानना कठिन कार्य है।

वर्ष में नियत रूप से बारह महीने होते हैं। परन्तु कभी–कभी एक अधिमास होता है। वरूण सूक्त में इस अधिमास की सत्ता परिवाचक मंत्र है –

''**वेदमासो घृतव्रतो द्वादषप्रजावतः। वेद्यय उपजायते।''** (ऋ.सं.1 ।25 ।8)

नक्षत्रों का ज्ञान संहिता तथा ब्राह्मण ग्रंथों में धीरे–धीरे परिवर्धित होता गया। ऋग्वेद में दो चार ही नक्षत्रों के नाम निर्दिष्ट किए गये हैं। ऋक् संहिता के एक मंत्र में दो नक्षत्रों का एकत्र उल्लेख है –

सूर्यायावहतुः प्रागाद् सविता यमवासृजत्।

अघासुहन्यन्तेगावोअजुन्योः पर्युह्वयते।। (ऋ. सं. 10 ।85 ।13)

अथर्ववेद संहिता में भी यही मंत्र आया है। (14 ।1 ।13) वहां अघासु के स्थान पर मघासु और अर्जुन्यो के स्थान पर फाल्गुनी सुपाठ उपलब्ध है। इस प्रकार वेदों में सताइस नक्षत्रों के नाम उपलब्ध है।

सूर्य की गति से सम्बन्ध रखने से अयन दो होते हैं उत्तरायण और दक्षिणायन। सायंन मकरारम्भ से लेकर कर्कारम्भ पर्यन्त उत्तरायण होता है और कर्कारम्भ से मकरारम्भ तक दक्षिणायन होता है। शतपथ ब्राह्मण (2 ।1 ।3) का कथन है कि सूर्य बसन्त, ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतुओं में उत्तरायण और अन्य तीन ऋतुओं में दक्षिणायन होता है नारायण उपनिषद के अनुसार 80 के अनुसार ज्ञानी व्यक्ति के उत्तरायण में मृत्यु होने पर देव मार्ग से जाकर आदित्य के साथ

सायुज्य की उपलब्धि होती है और दक्षिणायन में मरने पर पितृ मार्ग में जाकर चंद्रमा के साथ सायुज्य की उपलब्धि होती है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि ज्योतिष शास्त्र की नींव बहुत ही गहरी तथा प्राचीन है। जो आगे चलकर एक वेदांग माना जाने लगा ।

अतः वेदांग ज्योतिष का वेद के कर्मकाण्ड का मर्म समझने में महान योगदान रहा है।

IJOMRC